P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-1) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

वेद : मानव सभ्यता की प्रथम प्रामाणिक प्रतिध्वनि

सारांश

निर्विवाद रूप में वेद विश्व के आद्य ग्रन्थ हैं फिर भी वे काल बाह्य कदापि नहीं हैं। सच कहा जाय; तो वे नितनूतन, चिर–प्रासङ्गिक एवं सतत जीवन्त वाङ्मय के रूप में आज भी हमारे सामने अक्षुण्ण–से बने हुए हैं। पुरुषार्थ–चतुष्टय के अचूक सिद्धि–साधन के रूप में मानव के लिए उनका सार्वकालिक महत्त्व सर्वथा सुस्पष्ट है। जहाँ एक ओर वे धर्म, दर्शन, अध्यात्म, समाज और जीवन के लिए नितान्त आधारभूत उपक्रम या उपादान जुटाते हैं; वहीं दूसरी ओर वे अधुनातन विज्ञानों को भी सदा सार्थक सङ्केत देते रहते हैं। मानव–जीवन का अन्तिम पुरुषार्थ और चरम लक्ष्य मोक्ष है। मोक्ष की ओर अग्रसर होने के लिए अमृत–सन्धान करना पड़ता है। 'मृत्योर्मामृतं गमय', 'विद्ययाऽमृतमश्नुते', 'अग्ने नय सुपथा राये' जैसे वेदवाक्य उसी दिशा में आगे बढ़ने के लिए हमें प्रेरित करते हैं। प्रस्तुत शोध–पत्र में चारों वेदों की संहिताओं के संक्षिप्त विवरण के साथ ही उनके ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् भागों के वर्गीकरण का निरूपण किया गया है। अन्त में वेदाङ्गों का भी संक्षिप्त परिचय दिया गया है। वेदों के रचनाकाल पर भी एक विहङ्गम दृष्टि डाली गयी है।

मुख्य शब्द : ऋचा, त्रयी, संहिता, ब्राह्मण, उपनिषद्, आरण्यक, वेद, वेदान्त, ज्ञान काण्ड, पराविद्या, वेदङ्ग।

कौमुदी श्रीवास्तव
एसोसिएट प्रोफेसर,
संस्कृत विभाग,
राजर्षि टण्डन महिला महाविद्यालय,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

प्रस्तावना

यह बात तो अब निर्विवाद रूप से सर्वमान्य हो चुकी है कि भारत के ऋषियों द्वारा प्राचीन संस्कृत भाषा में उपनिबद्ध, ज्ञान–राशि जिसे 'वेद' कहा जाता है –– मानव–सभ्यता की प्रथम प्रामाणिक प्रतिध्वनि है। ऋषियों के अपने गम्भीर चिन्तन और मनन के प्रतिफलस्वरूप जो कुछ भी ज्ञान–विज्ञान इन वेदों में संकलित एवं संगृहीत है वह जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और लय का सुविवेचित स्वरूप तो प्रस्तुत करता ही है; इन सबके कारणभूत तत्त्वों, इनकी सम्भावित प्रक्रियाओं और इनकी गतिविधियों पर भी सुस्पष्ट प्रकाश डालता है। इसीलिए वेदों में दृश्यमान जागतिक पदार्थों के अतिरिक्त, अदृश्य शक्ति संस्थानों के प्रतीक स्वरूप देवी–देवताओं के अलौकिक रूपों, स्वभावों तथा चारित्रिक विविधताओं का भव्य एवं प्रभु विष्णु वर्णन समुपलब्ध होता है। समस्त जागतिक स्थितियों को सुखमय, कष्टरहित एवं मनोनुकूल बनाने के लिए इन अतिमानव दिव्यतत्त्वों के अनुकूलन एवं प्रसारण के लिए इनकी नानाप्रकार की स्तुतियों, प्रशंसाओं और उनसे जनजीवन के सुख सौविध्य सम्पादन हेतु भाँति–भाँति से याचनाएँ, प्रार्थनाएँ एवं आवाहनों तथा अनुरोधों का मुखर समायोजन किया गया है।

इन सब को भाषा के जिस स्वरूप में प्रकट किया गया है, वह प्रायः पद्यात्मक है। पद्यात्मक वाक्य ही ऋक् या 'ऋचा'[1] कहे जाते हैं इसीलिए इन ऋचाओं के संग्रहात्मक स्वरूप को 'ऋग्वेद' की संज्ञा दी गयी है। 'ऋग्वेद' में प्रायः ऋचाओं का ही बाहुल्य है। समस्त वैदिक वाङ्मय में ऋग्वेद की संहिता अर्थात् 'ऋक्संहिता' ही प्राचीनतम है। ऋक्संहिता में संकेतित और अभिप्रेत 'यज्ञों', होमों और उनसे सम्बन्धित तथा कालक्रम से परिवर्द्धित यज्ञादिक्रियाओं एवम् उन क्रियाओं में प्रधान या गौणकर्मों के उपयोग में आने वाले द्रव्य, देवता तथा स्तुति आदि विषयक मन्त्रों को वर्णित करने वाली संहिताएँ यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के नाम से प्रसिद्ध होकर अस्तित्व में आयीं।

अपने भाषागत स्वरूप के अनुसार वेदों के ऐसे मन्त्र (ऋचाएँ) जो संगीतशास्त्र के अनुरूप गेय भी हैं, 'सामन्'[2] कहे जाते हैं; इसीलिए जिस वैदिक संहिता में प्रायः 'सामन्' नामक मन्त्रों की बहुलता है उसे 'सामसंहिता' की संज्ञा दी गयी है। शेष मन्त्र 'यजुस्'[3] कहे जाते हैं। 'यजुस्' मन्त्र प्रायः गद्य रूप के होते हैं अतः इस प्रकार के मन्त्रों के बाहुल्य वाली वैदिक संहिता 'यजुः संहिता' के नाम से विख्यात हुई। ये मन्त्र और इनके अतिरिक्त जीवन के अन्य व्यापारों से सम्बन्धित ऋषिवचन 'आथर्वण–संहिता' में उपनिबद्ध हुए हैं।

इस प्रकार मन्त्रों के विषय–संग्रह के आधार पर 'चार वेद' कहे जाते हैं – ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। इस समूची वेद–राशि को रचना के प्रकार के आधार पर 'त्रयी' संज्ञा दी जाती है। चारों वेदों में ऋचाएँ, गेयमन्त्र और गद्यमन्त्र – ये तीन प्रकार के ही मन्त्र हैं, इसलिए ये चारों ही वेद 'त्रयी' संज्ञा से भी पुकारे जाते हैं। इन चारों संहिताओं के वाक्य 'मन्त्र' कहे जाते हैं। वैदिक मन्त्रों के रूप में ऋषियों की मनीषा से स्फुरित ज्ञानराशि वस्तुतः एक ही थी, किन्तु कालान्तर में महर्षि कृष्णद्वैपायन व्यास ने इस चारों प्रधान ऋत्विजों के द्वारा प्रयुक्त किये जाने के आधार पर ऋग्वेद संहिता, यजुर्वेद संहिता, सामवेद संहिता और अथर्ववेद संहिता नाम से चतुर्धा वर्गीकृत कर दिया है। इस वर्गीकरण का प्रेरक और चाहे जो तत्त्व रहा हो किन्तु प्रकटतः वह तत्त्व यज्ञ के ऋत्विजों के अलग–अलग उपयोग किये जाने वाले मन्त्रों का आधार ही था। यज्ञानुष्ठान कार्य में चार प्रधान ऋत्विज होते थे–1. होता, 2. अध्वर्यु, 3. उद्गाता और 4. ब्रह्मा। इनमें से 'होता' नामक ऋत्विज के द्वारा उच्चारित किये जाने वाले वेदमन्त्रों के लिए संकलित संहिता 'ऋग्वेदसंहिता' अध्वर्यु के द्वारा उच्चारणीय मन्त्रों वाली संहिता 'यजुर्वेद संहिता', उद्गाता के प्रयोग में आने वाली संहिता 'सामवेदसंहिता' और 'ब्रह्मा' नामक अध्यक्ष ऋत्विज (Head Priest) के द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले मन्त्रों वाली संहिता 'अथर्ववेद संहिता' के नाम से प्रसिद्ध हुई है।

इन संहिताओं के मन्त्रों की विशेष व्याख्याएँ, इनमें संकेतित और संसूचित देवों तथा यज्ञों के विस्तृत विवरण और इनके लिए उपयोगी नानाविध प्रक्रियाओं के लेखा–जोखा के रूप में रचे गये ग्रन्थ 'ब्राह्मण' नाम से अस्तित्व में आए। इन्हें 'ब्राह्मण' कहे जाने का कारण यह था कि ये ग्रन्थ उन–उन वेदमन्त्रों और उनमें इंगित यज्ञों के स्वरूपों का विवरण और व्याख्यान प्रस्तुत करते थे। 'ब्रह्म' शब्द परमात्मतत्त्व और 'ब्रह्मा' नामक देवता के अतिरिक्त 'वेदमन्त्र'[4] और याग के प्रधान ऋत्विज 'ब्रह्मा'[5] का भी वाचक होता है, अतः वेदमन्त्रों का व्याख्यान करने वाले तथा प्रधान ऋत्विज के लिए आवश्यक अर्थात् यज्ञों से सम्बन्धित पूरी जानकारी देने वाले ग्रन्थ 'ब्राह्मण' कहे गये। यद्यपि मुख्यतया चारों संहिताओं को ही 'वेद' संज्ञा प्रदान की जाती रही है, तथापि इनके भाष्य–व्याख्यान और विवरण आदि प्रस्तुत करने वाले 'ब्राह्मण' ग्रन्थों को भी 'वेद' कहे जाने की परम्परा विद्वानों के बीच विद्यमान रही है। इसलिए बौधायन और आपस्तम्ब इत्यादि सूत्रकार ''मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्''–कहते हुए मन्त्र और तत्सम्बद्ध ब्राह्मण भाग–इन दोनों को 'वेद' मानते हैं। महर्षि पाणिनि ने भी 'ब्राह्मण' ग्रन्थों को 'वेद', या 'श्रुति' से अभिन्न नहीं माना जैसा कि उनके द्वारा रचित ''छन्दोब्राह्मणानि च तद्विषयाणि''–(अष्टाध्यायी, 14–2–66) सूत्र से स्पष्ट है। आचार्य सायण भी ''मन्त्रब्राह्मणात्मकः शब्दराशिर्वेदः'' स्वीकार करते हैं। जैमिनि का मत भी यही है। पाश्चात्य विद्वानों में मैक्समूलर आदि भी 'वेद' शब्द से मन्त्र अर्थात् संहिता तथा ब्राह्मण दोनों को ही 'वेद' शब्द से बोध्य मानते हैं। किन्तु 'वेद' शब्द का वास्तविक या रूढ अर्थ चारों संहिताएँ अर्थात् मन्त्र भाग ही है–ऐसा मानने वाले विद्वानों की भी कमी नहीं है। पाश्चात्य विद्वान् विल्सन और ग्रिफ़िथ आदि इसी मत के पोषक हैं। सामान्य जनों में भी 'वेद' शब्द का रूढ अर्थ संहिता भाग ही प्रचलित है। ''यद्यपि अत्र सन्देहो नास्ति यद् बहुभिः सूत्रकारैरुभयोर्मन्त्रात्मकत्वं स्वीकृतम् तथापि वेदव्याख्यानरूपत्वाद् ब्राह्मणानान्तु वेदत्वमौपचारिकमेव भवितुमर्हति, न तु वास्तविकम्...अन्यथा रघुवंश काव्यवत् मल्लिनाथीय व्याख्याया अपि काव्यत्वप्रसक्तेर्दुर्वारापत्तिः इति।''[6] इस प्रकार ऋक्संहिता, यजुःसंहिता, सामसंहिता और आथर्वण संहिता ही 'वेद' शब्द के रूढ अर्थ हैं।

इसलिए वेदों के ब्राह्मण भाग को 'वैदिक वाङ्मय' तो कहा जा सकता है, किन्तु 'वेद' नहीं। चारों वेदों की संहिताओं के अतिरिक्त उसके ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् अलग–अलग प्रसिद्ध हैं। ये ब्राह्मण, आरण्यकादि ग्रन्थ मूल संहिताओं से प्रायः अलग–अलग उपलब्ध होते हैं। कहीं–कहीं इनमें से अनेक अंश मूल संहिता भाग के अन्तर्गत भी समाविष्ट हैं। कृष्ण यजुर्वेदीय शाखा में ब्राह्मण आदि भागों का मूल संहिता भाग में अन्तर्निवेश देखने को मिलता है। वेद की संहिताएँ हैं–1. ऋक्संहिता, 2. यजुःसंहिता, 3. सामसंहिता, 4. आथर्वणसंहिता।

ऋक्संहिता

इसमें लगभग 10580 ऋचाएँ [7] (अर्थात् मन्त्र) हैं। ये ऋचाएँ 1017 सूक्तों में विभाजित हैं। इस संहिता में कुल 10 मण्डल हैं। इसके अतिरिक्त 16 बालखिल्य संज्ञक सूक्त भी इस संहिता में समावेशित हैं। अध्यापक, अध्यापनस्थल तथा गुरुपरम्परा आदि के भेद से 'ऋग्वेद संहिता' की पाँच शाखाओं के नाम सुने जाते हैं–1. शाकल, 2. बाष्कल, 3. आश्वलायन, 4. शाङ्खायन और 5. माण्डूकायन। इनमें से पहली दो अर्थात् शाकल और बाष्कल शाखाएँ ही अब उपलब्ध हैं। उत्तर भारत में 'शाकल' शाखा की ही ऋक्संहिता लब्धप्रसर है। इस संहिता का विभाजन अष्टकों के रूप में भी हुआ है। तदनुसार इसमें कुल 8 अष्टक हैं। प्रत्येक अष्टक में 8 अध्याय हैं। ये अध्याय कुल 2006 वर्गों में विभक्त हैं। प्रत्येक वर्ग में प्रायः 5–5 मन्त्र हैं। किन्तु यह विभाजन बहुत वैज्ञानिक नहीं है।

यजुर्वेदसंहिता

इसमें कुल 40 अध्याय हैं एवं 1975 कण्डिकाएँ हैं। इस वेद के दो स्वरूप प्रचलित हैं –– कृष्ण यजुर्वेदसंहिता तथा शुक्ल यजुर्वेदसंहिता। इस संहिता के कृष्णत्व और शुक्लत्व का निर्धारक तत्त्व संहिता में ब्राह्मण भाग का मिला हुआ होना और ब्राह्मण भाग से सर्वथा पृथक्कृत होना है। ब्राह्मण भाग से अमिश्रित मन्त्र संकलन 'शुद्ध' और ब्राह्मणभागमिश्रित मन्त्रसंकलन 'कृष्ण' कहा गया है। शुक्ल यजुर्वेदसंहिता की प्रधान शाखा 'वाजसनेयी' और कृष्ण यजुर्वेद की प्रधान शाखा 'तैत्तिरीय' है। वाजसनेयी शाखा के भी दो भेद हो गये हैं–1. माध्यन्दिन, और 2. काण्व। इनमें से माध्यन्दिनशाखा उत्तर भारत में और काण्वशाखा दक्षिण भारत में प्रचलित है।

सामवेदसंहिता

इस संहिता में कुल 1549 मन्त्र हैं। ये सब गेय मन्त्र हैं। इनमें से लगभग 1474 मन्त्र तो 'ऋग्वेदसंहिता' से ली गयी ऋचाएँ ही हैं। केवल 75 मन्त्र सामवेद के

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-1) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

अपने हैं। यह संहिता 'पूर्वार्चिक' और 'उत्तरार्चिक' नाम के दो भागों में विभक्त है। 'पूर्वार्चिक' भाग में 6 और 'उत्तरार्चिक' भाग में 9 प्रपाठक हैं। प्रपाठकों को 'अध्याय' भी कहा गया है। पतञ्जलि[8] के कथनानुसार सामवेदसंहिता की लगभग 1000 शाखाएँ थीं। किन्तु आजकल केवल 3 शाखाएँ ही उपलब्ध हैं – 1. कौथुमीय (गुजरात प्रदेश में प्रचलित) 2. राणायनीय (महाराष्ट्र में लब्धप्रसर) तथा 3. जैमिनीय (कर्नाटक में प्रचलित)। अनुयायियों की संख्या आदि की दृष्टि से कौथुमीय शाखा अधिक महत्त्वपूर्ण है। सामवेदसंहिता का 'पूर्वार्चिक भाग', 1. आग्नेय, 2. ऐन्द्र, 3. पवमान और 4. आरण्यक नामक 4 पर्वों में विभाजित है; जबकि 'उत्तरार्चिक' भाग, 1. दशरात्र, 2. संवत्सर, 3. एकाह, 4. अहीन, 5. सत्र, 6. प्रायश्चित्त एवं 7. क्षुद्र नामक यज्ञानुष्ठानविधानों से सम्बन्धित है।

अथर्ववेदसंहिता

इसे ब्रह्मवेद, अङ्गिरोवेद, अथर्ववेद इत्यादि नामों से भी जाना जाता है। इसमें कुल 20 काण्ड, 731 सूक्त तथा 5987 मन्त्र हैं।[9] इनमें से प्रारम्भिककाण्ड तो अपेक्षाकृत छोटे–छोटे हैं, जबकि 11वाँ काण्ड, जो कि भैषज्य, राष्ट्रसमृद्धि तथा अध्यात्म से सम्बन्धित विषयों वाला है, पर्याप्त बड़ा अर्थात् 72 सूक्तों तथा 453 मन्त्रों वाला है। 20वाँ काण्ड 'सोमयाग' विषयक है। इसमें 958 मन्त्र हैं, जिनमें से अधिकांश ऋक्संहिता से ही लिए गये हैं। इस संहिता की लगभग 9 शाखाएँ प्राचीनकाल में प्रथित थीं, जिनमें से अब केवल 'पैप्लाद' और 'शौनक' ही समुपलब्ध हैं।

इन चारों वेदों के अन्तर्गत ब्राह्मणादि भागों (अर्थात् ब्राह्मण, आरण्यक एवम् उपनिषद्) का संक्षिप्त विवरण निम्नवत् है–

ऋग्वेद

ब्राह्मण ग्रन्थ–	1. ऐतरेय ब्राह्मण,	2. कौषीतकी ब्राह्मण[10]
आरण्यक ग्रन्थ–	1. ऐतरेय आरण्यक,	2. कौषीतकी आरण्यक
उपनिषद् ग्रन्थ–	1. ऐतरेय उपनषद्,	2. कौषीतकी उपनिषद्

यजुर्वेद

ब्राह्मणग्रन्थ–	(शुक्लयजुर्वेदीय)–	1. शतपथब्राह्मण
	(कृष्णयजुर्वेदीय)–	1. तैत्तिरीय ब्राह्मण
आरण्यक ग्रन्थ–	(शुक्ल यजुर्वेदीय)–	1. बृहदारण्यक
	(कृष्णयजुर्वेदीय)–	1. तैत्तिरीय आरण्यक
उपनिषद् ग्रन्थ–	(शुक्ल यजुर्वेदीय)–	1. ईशावास्योपनिषद्
		2. बृहदारण्यकोपनिषद्
	(कृष्णयजुर्वेदीय)–	1. तैत्तिरीयोपनिषद्
		2. मैत्रायणी उपनिषद्
		3. काठकोपनिषद्
		4. श्वेताश्वतरोपनिषद्

सामवेद

ब्राह्मणग्रन्थ–	1. ताण्ड्य ब्राह्मण
	2. सामविधान ब्राह्मण
	3. षड्विंश ब्राह्मण
	4. जैमिनीय ब्राह्मण
आरण्यक ग्रन्थ–	1. छान्दोग्य आरण्यक
	2. जैमिनीय आरण्यक
उपनिषद् ग्रन्थ–	1. छान्दोग्योपनिषद्
	2. केनोपनिषद्
	3. जैमिनीयोपनिषद्

अथर्ववेद

ब्राह्मण ग्रन्थ–	गोपथब्राह्मण
आरण्यक ग्रन्थ–	अनुपलब्ध[11]
उपनिषद् ग्रन्थ–	1. प्रश्नोपनिषद्
	2. मुण्डकोपनिषद्
	3. माण्डूक्योपनिषद्

इस संक्षिप्त विवरण का ज्ञान हो जाने पर यह स्पष्टतया समझा जा सकता है कि वैदिक संहिताएँ ही 'वेद' पदवाच्य हैं। वेदोक्त यागादिकर्मों, देवताओं और यागादि–साधनभूत द्रव्यादि का वर्णन, विवेचन और व्याख्यान ब्राह्मण ग्रन्थों में हुआ है। इन्हीं में उपलब्ध आध्यात्मिकता और इनके अर्थों की सूक्ष्मता के चिन्तन–मनन की प्रधानता वाला वैदिक वाङ्मय 'आरण्यक' ग्रन्थों के रूप में विकसित हुआ है। इनका नाम ही इनकी सूक्ष्मता और प्रतिपाद्य विषयों की गम्भीरता को हृदयङ्गम कराने के लिए एकान्त अरण्यों में इनके अध्ययन की आवश्यकता को द्योतित करता है। तदनन्तर इन सब की जानकारी से उपलब्ध जीवन के रहस्यों की पूरी विवेचना और जानकारी प्रदान कराने वाले उपनिषद् ग्रन्थों का आविर्भाव हुआ है। वेदों से प्राप्त एवं सकल

क्रियाओं की लक्ष्यभूत ज्ञानराशि को प्रदान कराने वाली ये उपनिषदें ही 'वेदान्त', 'ज्ञानकाण्ड' और 'परा विद्या' आदि नामों से प्रसिद्ध हुई हैं। इसीलिए भारतीय मनीषी उपनिषदों को वैदिकवाङ्मय का चरम प्रतिपाद्य स्वीकार करते हैं। समस्त पदार्थज्ञान, वस्तुविज्ञान, जीवनदर्शन, देवदेवाधिज्ञान, यागविधानानुष्ठान इत्यादि का पर्यवसायीबोध इन उपनिषदों से ही होता है। इसलिए इन्हें समूचे वैदिकवाङ्मय में मूर्धन्य स्थान प्राप्त है।[12] इन चारों वेदों से सम्बन्धित उपनिषद् ग्रन्थों की संख्या बहुत बड़ी है। 'मुक्तिकोपनिषद्' में यह संख्या 108 बतायी गयी है, किन्तु विषयवस्तु, कालक्रम, भाषागत स्वरूप और प्रसिद्धि इत्यादि की दृष्टि से प्रायः 12 उपनिषदें विद्वज्जगत् में सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं। इनके नाम का संग्रह (मैत्रायणी एवं श्वेताश्वतरोपनिषद् के अतिरिक्त) निम्नलिखित श्लोक में द्रष्टव्य है–

ईशकेनकठप्रश्नमुण्डमाण्डूक्यतित्तिरि।
ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं दश।।[13]

वेदाङ्गपरिचय

एतदनन्तर परवर्ती मनीषियों द्वारा इन संहिताओं, ब्राह्मणग्रन्थों आरण्यकों और उपनिषदों के ठीक–ठीक अर्थबोध एवम् उपयोग को सुविधाजनक बनाने वाले वेदाङ्गों की रचना हुई। वेदाङ्ग छह हैं–शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्दस् और ज्योतिष। शिक्षाग्रन्थों में वर्णोच्चारण, स्वराङ्कन, पदपाठ आदि के नियम वर्णित हैं। शिक्षाग्रन्थों में पाणिनीयशिक्षा, नारदीयशिक्षा, याज्ञवल्क्यशिक्षा आदि लगभग 30 ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। ऋक्प्रातिशाख्य आदि प्रातिशाख्यग्रन्थ शिक्षा नामक वेदाङ्ग में ही अन्तर्भावित माने जाते हैं।[14] यज्ञहोमादि सारे कर्मकाण्डों के प्रतिपादक ग्रन्थ 'कल्प' कहे जाते हैं। ये प्रायः अत्यन्त सारगर्भित एवं सूक्ष्म रूप में विरचित हैं, इसलिये इन्हें 'कल्पसूत्र' की संज्ञा दी गयी है। इसका विभाजन श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र और धर्मसूत्रों में हुआ है। ऋग्वेद से सम्बन्धित श्रौतसूत्रों में आश्वलायन और शाङ्खायन श्रौतसूत्र अत्यधिक प्रसिद्ध हैं। इसी प्रकार शुक्लयजुर्वेद से सम्बन्धित पारस्कर गृह्यसूत्र अत्यन्त प्रसिद्ध है। धर्मसूत्रों में यागादि के अतिरिक्त अन्य लौकिक आचार–विचारों का विधिवत् प्रतिपादन हुआ है। 'व्याकरण' नामक वेदाङ्ग में शब्दों के शुद्धाशुद्धत्व का साङ्गोपाङ्ग विवेचन हुआ है। व्याकरण ग्रन्थों में पाणिनि कृत 'अष्टाध्यायी' सर्वाधिक प्रसिद्ध है। क्लिष्ट एवं सन्दिग्ध पदों का निर्वचन निरुक्त नामक वेदाङ्ग का प्रमुख विषय है। निरुक्तकारों में सर्वाधिक ख्यातिलब्ध आचार्य 'यास्क' हुए हैं। वैदिक छन्दों का स्वरूप निर्धारण और विश्लेषण 'छन्दस्' नामक वेदाङ्ग में किया गया है। प्रत्येक यागादि कर्म के लिये उपयुक्त मुहूर्तज्ञान देने वाले और ग्रह–नक्षत्रादि ज्योतिष्पिण्डों की गति–स्थिति आदि का ज्ञान उपलब्ध कराने वाला वेदाङ्ग 'ज्योतिष' नाम से प्रसिद्ध है। प्राचीन महर्षियों में 'लगध' के अतिरिक्त जिन ज्योतिषियों ने इस वेदाङ्ग के कलेवर को सर्वथा समृद्ध किया है उनमें सूर्य, ब्रह्मा, व्यास, वसिष्ठ, अत्रि, पराशर, कश्यप, नारद, गर्ग और लोमश इत्यादि प्रमुख हैं।

वेदों का रचनाकाल

वेदों की संहिताएँ बहुत प्राचीन काल की रचनाएँ हैं। ऋग्वेद संहिता उनमें से प्राचीनतम है। इस विषय में तो सभी विचारक एकमत हैं। किन्तु यह कब की रचनाएँ हैं अथवा कितने वर्षों पूर्व विरचित हुई होंगी, इसका निश्चय करना टेढ़ी खीर है। किसी ने इनका रचना काल अरबों वर्ष पूर्व माना है[15] और किसी ने इन्हें ईसा पूर्व 1200 वर्ष की कृति बताया है।[16] इस सन्दर्भ में अनेक लालबुझक्कड़ी मत, विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं, जो न तर्क की कसौटी पर खरे उतरे और न ही प्रामाणिक पृष्ठभूमि पर प्रतिष्ठा पा सके। पाश्चात्त्य विद्वान् ओल्डेनब्रेग ऋग्वेद का सम्भावित रचनाकाल 2500 ई0 पू0 मानते हैं। मैक्डोनल की दृष्टि में ऋग्वेद की रचना 1300 ई0 पू0 हुई होगी। डॉ0 हर्मन जैकोबी ने ऋग्वेद का समय ज्यौतिषीय आधार पर 4500 ई0पू0 निर्धारित किया है। लगभग ज्यौतिषीय आधारों पर ही लोकमान्य तिलक ऋक्संहिता का रचनाकाल 6000 ई0 पू0 सिद्ध करते हैं। विण्टरनित्ज़ और ब्यूलर वेदों का रचनाकाल 4000 ई0 पू0 स्वीकार करते हैं। मतवैभिन्य के इस पचड़े में पड़ना और किसी निर्णायक तिथि को सिद्ध करना, इस लेख के कलेवर के अन्तर्गत समाविष्ट नहीं हो सकता।

अतः ऋग्वेद का रचनाकाल ईसा से पाँच या छह सहस्त्राब्दीपूर्व मानते हुए इस विषय को यहीं विराम दिया जाना श्रेयस्कर होगा।

निष्कर्ष

ऋक्संहिता, यजुःसंहिता, सामसंहिता और आथर्वणसंहिता –– इन चारों संहिताओं को ही 'वेद' की संज्ञा प्रदान की गयी है। वैदिक वाङ्मय के अन्तर्गत ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् ग्रन्थ आते हैं। ब्राह्मण–भाग में वेदोक्त यागादिकर्मों, देवताओं और यागादिसाधनभूत द्रव्यादि के वर्णन, विवेचन एवं व्याख्यान मिलते हैं। उनमें सान्निहित अध्यात्म–बिन्दुओं के अर्थावबोध के निमित्त चिन्तन–मनन को प्राथमिकता देने वाला वैदिक वाङ्मय 'आरण्यक' ग्रन्थों के रूप में विकसित हुआ है। प्रतिपाद्य विषयों की सूक्ष्मता एवं गम्भीरता को आत्मसात् करने के लिए निर्जन अरण्यों में उनके अध्ययन की नितान्त आवश्यकता को द्योतित करते हैं ये आरण्यक ग्रन्थ। उपनिषदों को वैदिक वाङ्मय में शीर्षस्थ स्थान प्राप्त है। वे 'वेदान्त', 'पराविद्या' एवं 'ज्ञानकाण्ड' के रूप में भी जानी जाती हैं। परवर्ती मनीषियों द्वारा वैदिक संहिताओं, ब्राह्मण–ग्रन्थों, आरण्यकों एवं उपनिषदों को भलीभाँति समझने एवं उपयोग में लाने के उद्देश्य से वेदाङ्गों की रचना की गयी थी। वेद, वैदिक वाङ्मय और वेदाङ्ग में ब्रह्माण्ड–रहस्य, प्रकृति–पर्यावरण, पदार्थ–विज्ञान, सृष्टि–विधान, तत्त्वदर्शन और जीवन–यापन के अनगिनत सूत्र–सिद्धान्त गूढ रूप में निबद्ध हैं। हमारी जीवन–यात्रा सहज भाव से सम्पूर्णता के साथ निर्विघ्न रूप में भलीभाँति सम्पन्न हो ऐसी मङ्गलकामनाओं और दिव्य स्तुतियों से वैदिक सूक्तों के मन्त्र पदे पदे अनुस्यूत हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. ''तेषाम् ऋक् यत्रार्थवशेनपादव्यवस्था''–जैमिनिसूत्र, 2–1–35.
2. ''गीतिषु सामाख्या''–जैमिनिसूत्र 2–1–36.
3. ''शेषे यजुः शब्दः''–वही 2–1–37.
4. ''ब्रह्म वै मन्त्रः'' शतपथ ब्राह्मण–7–1–1.5.
5. ''ब्रह्म तत्त्वतपोवेदे न द्वयोः पुंसि वेधसि। ऋत्विग्योगभिदोर्विप्रे''..... ।।–मेदिनी0।
6. पं0 द्विजेन्द्रनाथशास्त्रिविरचित 'संस्कृतसाहित्यविमर्शः', पृ0 139.
7. ''ऋचां दशसहस्त्राणि, ऋचां पञ्चशतानि च। ऋचामशीति पादाश्चैतत् पारायणमुच्यते।।''–शौनककृत अनुक्रमणी।
8. ''सहस्रवर्त्मा सामवेदः''–महाभाष्य।
9. कुछ विद्वान् कुल मन्त्रसंख्या केवल 5849 ही मानते हैं।
10. 'कौषीतकी' ब्राह्मण को ही 'शाङ्खायन ब्राह्मण' नाम से भी जाना जाता है। कौषीतकी नाम वाले आरण्यक और उपनिषद् भी 'कौषीतकी' के स्थान पर 'शाङ्खायन' नाम से व्यवहृत होते हैं। ''शाङ्खायनापरनामधेयं कौषीतकिब्राह्मणञ्चेति।''–संस्कृतसाहित्यविमर्शः, पृ0 139.
11. ''अथर्ववेदस्य नाद्यावधि एकमप्यारण्यकमुपलब्धम्'' –संस्कृतसाहित्यवमर्शः, पृ0 146.
12. ''सेयं ब्रह्मविद्यारहस्योद्घाटनकरी... अविद्याध्वान्तविध्वंसनकरी... प्रकृतिपरमात्मयथार्थस्वरूपप्रकटनकरी... अमन्दब्रह्मानन्दमकरन्दनिः स्यन्दनकरी, विश्वशङ्करी भगवती उपनिषत्तरिरेव अलक्ष्यतीरे, निरतिशयगम्भीरेऽस्मिन् भवाब्धिनीरे निमज्जतो जनाननायासेन तत्पारं नेतुमीश्वरीति तु निर्विवादम्''–संस्कृतसाहित्यविमर्शः, पृ0 149.
13. इस श्लोक में बहुत से लोग प्रथमपंक्ति के अन्तिम पद को 'तित्तिरि' के स्थान पर 'तित्तिरिः' लिखते हैं। किन्तु व्याकरणज्ञान न होने के कारण वे ऐसा करते हैं, क्योंकि इस स्थल पर ''इतरेतरद्वन्द्व समास'' नहीं है। अतः 'समाहारद्वन्द्व' ही मानना पड़ेगा। समाहारद्वन्द्व में एकवचन नपुंसकलिङ्गत्व ही सम्भव है, फलतः 'तित्तिरि' पाठ ही शुद्ध है, 'तित्तिरिः' नहीं।
14. कुछ विद्वान् 'प्रातिशाख्य' ग्रन्थों को 'शिक्षा' नामक वेदाङ्ग के अन्तर्गत न मानते हुए, उन्हें 'व्याकरण' नामक वेदाङ्ग में अन्तर्भावित करते हैं। पं0 द्विजेन्द्रनाथ शास्त्री अपने 'संस्कृतसाहित्यविमर्श' नामक ग्रन्थ में स्पष्टतः लिखते हैः– ''वैदिकं व्याकरणं हि प्रातिशाख्यमुच्यते''–पृ0 127.
15. महर्षि दयानन्द कृत भाष्य की भूमिका
16. मैक्समूलर कृत 'ऋग्वेद' की भूमिका।